ISSN: 2393-8048
International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
Multidisciplinary, Multilingual, Indexed, Double Blind, Open Access, Peer-Reviewed, Refereed-International Journal.
SJIF Impact Factor =8.152, January-June 2025, Submitted in January 2025

हरदर्शन सहगल की कहानियों में धार्मिक संदर्भपरक उत्तर आधुनिकता बोध

ममता शर्मा, शोधार्थी, हिन्दी विभाग, श्रीखुशालदास विश्वविद्यालय, पीलीबंगा, हनुमानगढ़ (राज.)
ई–मेल : ms985513@gmail.com
डॉ. अरविन्द कुमार दीक्षित, शोध पर्यवेक्षक, श्रीखुशालदास विश्वविद्यालय, पीलीबंगा, हनुमानगढ़ (राज.)

शोधसार

भारतीय समाज में सनातन धर्म की विभिन्न शाखाओं–प्रशाखाओं सहित जैन, बौद्ध, सिक्ख, पारसी, इस्लाम, ईसाई एवं अन्य धर्मों के अनुयायी एक प्रकार से बहुधार्मिकतापूर्ण सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश का संनिर्माण करते हैं। हिन्दी कहानी–साहित्य में विभिन्न धार्मिक मान्यताओं का सहज निरूपण हुआ है। बीकानेर (राजस्थान) के वयोवृद्ध कहानीकार हरदर्शन सहगल की कहानियों में भी यथाप्रसंग धार्मिक धारणाओं के उल्लेख मिलते हैं।

उत्तर आधुनिक युग में धार्मिक मान्यताओं के पक्ष–विपक्ष में अनेक मौलिक उद्भावनाएं देखी जा सकती है। समीक्ष्य कहानीकार हरदर्शन सहगल ने अपनी शताधिक कहानियों में हिन्दूधर्म के मत–मतांतरों सहित इस्लाम, सिक्ख, ईसाई एवं जैन धर्म की कतिपय रूढ़ मान्यताओं का खंडन करते हुए नए ढंग से विचार किए जाने की आवश्यकता पर बल दिया है।

इस शोधपत्र में यह दर्शाने का प्रयास किया है कि हरदर्शन सहगल ने कितने कौशल के साथ धार्मिक संदर्भों का सम्यक्–संतुलित विवेचन करने वाले पात्रों के व्यावहारिक संवादों का चित्रण किया है।

कुंजी शब्द– महावृत्तांतों, बेहिसाब, टोटेलिटी, उपासना–गृहों, वृद्ध–तपश्चरण, पूजास्थल, गोरखधंधा, अबोले, पुनरागमन, फवक्तन।

उत्तर आधुनिकतावाद धर्म, संस्कृति, दर्शन, अध्यात्म आदि के बारे में प्रचलित पारंपरिक अवधारणाओं को तार्किक नजरिए से देखने की पैरवी करता है। 'ल्योतार' ने अपनी पुस्तक 'दि पोस्ट मॉडर्न कण्डीशन' में महावृत्तांतों (मैटा–नैरेटिव) अर्थात् सभी सामाजिक–धार्मिक मान्यताओं की विश्वसनीयता पर सवाल खड़े किए थे। विचारक 'नीत्शे' ने 19वीं सदी में ही 'ईश्वर की मृत्यु' की घोषणा कर दी।

डेनियल बेल ने तो यहां तक कह दिया कि ''साम्यवादी उपासनागृहों की तमाम मूर्तियाँ या तो खण्डित हो चुकी हैं या संग्रहालयों में पुरातत्व अवशेषों के रूप में सहेज दी गई है।''[i] इसी प्रकार विभिन्न उत्तर–आधुनिकतावादी विचारकों ने धार्मिक साहित्य में दंत कथाओं एवं मिथकों के औचित्य पर पुनर्विचार करते हुए यहां तक कह दिया कि साहित्य नाम की कोई वस्तु नहीं है और राजनीति, दर्शन, अध्यात्म, धर्म आदि सभी केवल और केवल 'पाठ' (टेक्स्ट) ही है। डॉ. विवेकशंकर के शब्दों में ''उत्तर आधुनिकता सम्पूर्णता (टोटेलिटी), अधिवृत्तांतों, महावृत्तांतो (रामायण, महाभारत, बाइबिल इत्यादि) एवं मूल्य मीमांसा का खंडन करती है।''[ii]

समीक्ष्य कहानीकार हरदर्शन सहगल की कहानियों में भी धर्म के पारंपरिक स्वरूप के बजाए धर्म को विज्ञानपरक दृष्टिकोण से ही देखे जाने की वैचारिकता झलकती है। 'वर्जनाओं को लांघते हुए' कहानी संकलन की भूमिका स्वरूप अपने शोधालेख में उन्होंने पाप–पुण्य की अवधारणा पर पुनर्विचार की आवश्यकता पर बल देते हुए कटाक्षपूर्वक लिखा है– ''गुनाह गिन के करूँ, या बेहिसाब करूँ। सुना है, तेरी रहमत का कुछ हिसाब नहीं।

बेशक खुदा की रहमत, उसके हर बंदे पर, बेरोकटोक, बिना किसी भेदभाव, हर वक्त, बेशुमार, बरसती रहती हो, पर उसी (खुदा) के बंदों को यह सब कहाँ कबूल है! उसकी मंशा तो शुरू से ही रहमत अपने हिस्से में लेने और गुनाहों को दूसरों की झोली में डाल देने की रही है।

जिंदगी के हर मोड़ और हर मौके पर वही (खुदा का बंदा) दूसरे खुदा के बंदों के लिए सबसे बड़ा नुक्ताचीं बन उठता है; बेशक, इससे किसी दूसरे की जिंदगी में कितना ही खलल पड़े। खलल को तो छोड़िए, इस नुक्ताचीनी, ताकझाँक, छींटाकशी और मारपीट से दूसरों का जीना हराम करने में भी उसे कोई उज्र नहीं और न ही इसमें कोई पाप दिखलाई देता है। चींटी तक को न मारने का फल्सफः यहाँ खूब चलता है। धार्मिक प्रवृत्ति वाले हम हैं। ईश्वरपूजक बनने का ठेका भी हमीं ने ले रखा है, लेकिन दूसरे आदमी की जिंदगी से खिलवाड़ कर उसे किस तरह से उजाड़कर रख देते हैं, इस तबाही का हमें जरा भी अहसास नहीं होता।''[iii]

हिन्दी कथा–साहित्य में प्रेम–संबंधों पर केन्द्रित कथावस्तु का विश्लेषण करते हुए हरदर्शन सहगल ने साहिर लुधियानवी के हवाले से लिखा है– 'इश्क न पूछे दीन–धरम, ते इश्क न पूछे जात।'[iv]

वर्तमान कथा–साहित्य में विवाहेत्तर संबंधों का प्राचुर्यतापूर्ण उल्लेख होना उत्तर आधुनिकतावादी

यौन–स्वतंत्रता प्रवृत्ति का ही द्योतक है। धार्मिक संदर्भों का ही आश्रय लेते हुए हरदर्शन सहगल ने 'नियोगप्रथा' और उत्तर आधुनिकतावादी दृष्टिकोण की तुलना की है– ''रामायण, रघुवंश, अभिधान चिंतामणि, शब्दकल्पद्रुम के साथ वैदिक और महाभारत युग के बहुत सारे उद्धरण दिए हैं जिनमें प्रजापति, ययाति, उर्वशी आदि नामों के साथ भाई–बहन, दुहिता, भाभी के ऐसे संबंधों को संस्कृत श्लोकों के माध्यम से स्पष्ट दर्शाया गया है कि यह (नियोग) प्रथा प्रचलित थी (भले ही व्याख्याओं में संदेह की गुंजाइश हो सकती है)।

इसमें किसी प्रकार के दोष का अवकाश नहीं था। पौराणिक युग में भी इसका प्रचलन था और तांत्रिक साधनाओं में भी। सिद्धान्तों में कामाचरण या नियोग भले ही पृथक्–पृथक् अवगत होते हों, किन्तु व्यावहारिक दृष्टि में कामाचरण नियोगाचरण में कोई पार्थक्य नहीं है।

आलेख में राजाओं, ऋषि–महर्षियों के ऐसे अन्य कई प्रसंग भी मौजूद हैं। (यहाँ तक कि परम वृद्ध–तपश्चरण के कारण जीण–शीर्णकाय महर्षि च्यवन राजा ययाति की पुत्री सुकन्या को पत्नी रूप में ग्रहण करने को आतुर हो उठते हैं।) यदि प्राणिशास्त्र के अनुसार देखें तो मनुष्य–देह की मूल आवश्यकता को कैसे नकारा जा सकता है?''[v]

हरदर्शन सहगल की प्रेम कहानियों में काम–भावनाओं पर धार्मिक आख्यानों के माध्यम से थोपी गई 'काम–वर्जनाओं' पर भी समुचित विश्लेषण देखा जा सकता है। उनका यह कथन मर्मस्पर्शी है– ''शाक्त, बौद्ध धर्म के हीनयान पंथों में विकृत रूप से कामपूर्ति के प्रयत्न सामने आए। सुना जाता है भिक्षुणियाँ नवजात शिशुओं को कमंडलों में डालकर जंगलों में फेंक आती थीं। इसी प्रकार ननों के क्रियाकलाप भी सहज उजागर होते हैं। देवदासियों और मठाधीशों के आचरण भी किसी से छिपे नहीं हैं।

सहज कामप्रवृत्ति के दमन के कैसे–कैसे नतीजे सामने आते हैं– इसकी व्याख्या चिकित्साशास्त्र करता है। यह मुद्दा सआदत हसन मंटो की कई कहानियों से भी साफ जाहिर होता है।''[vi]

धार्मिक ग्रंथों से ही विभिन्न प्रसंगों को लक्षित करते हुए हरदर्शन सहगल ने वर्तमान में काम–वर्जना विषयक धार्मिक रूढ़ियों पर उत्तर आधुनिकतावादी नजरिए से विचार करते प्रश्नोत्तर–शैली में स्पष्ट लिखा है– ''आखिर यह माजरा, झमेला और पूरा गोरखधंधा क्या है? जो चीज हम अपने लिए चाहते हैं, वही चीज दूसरे के लिए वर्जित क्यों ठहराते हैं?

साधु–संत, धर्मगुरु आदि जो शिक्षाएँ अपने प्रवचनों में देते हैं, बहुत बार वही धर्मगुरु उनका उल्लंघन करते पाए जाते हैं। मोटे तौर से, हम अपने परम्परागत एवं सार्वजनिक मूल्यों को आधार मानते हुए सदा स्वतंत्रता के पक्षधर तो रहे हैं, किन्तु लम्पटता, उच्छृंखलता, स्वच्छंद एवं मुक्त आचरण के लिए हमारे जीवन–दर्शन में कोई स्थान नहीं।''[vii]

इस प्रकार स्पष्ट है कि हरदर्शन सहगल के कथा–साहित्य में धार्मिक रूढ़ियों के खण्डन, निराधार मान्यताओं के विरोध और संकीर्ण धर्मान्धता के दुष्प्रभावों को विफल किए जाने हेतु पात्रों के संवादों में ही उत्तर आधुनिक युगबोध का सार्थक निरूपण हुआ है। अब हम कतिपय कहानी–अंशों के उदाहरणों के आलोक में इस पर अधिक विचार करेंगे।

पूजास्थलों के बजाय मानवता को प्राथमिकता :–

हरदर्शन सहगल की कहानी 'सरहद पर सुलह' में दो भाईयों के पैतृक घर के बंटवारे में बीचों–बीच एक देवस्थान (चबूतरा) को लेकर तीव्र संघर्ष का मार्मिक ब्यौरा मिलता है। फतेहसिंह और जीतसिंह दोनों चचेरे भाईयों की पत्नियां चंदना और वंदना सगी बहनें है लेकिन बंटवारे की आग में उनको 'अबोले' रहना पड़ रहा है। अमावस की घोर अंधेरी ठंडी रात में कोई इस पूजा स्थल को तोड़ देता है। सभी जगकर देखते हैं। दोनों बहुओं के अलावा बाकी लोग झगड़ना शुरू हो जाते हैं– 'पाप चढ़ेगा।'

'उजड़ जाओगे।' देख लेना, भगवान की लाठी में आवाज नहीं होती।''

'ऐसी ओछी हरकत। कोई बाहरवाला तो कर नहीं सकता।'

'तो घर वालों ने नर्क में जाना है, पूजा–घर तोड़कर।''[viii]

इन संवादों में पारम्परिक धार्मिक मान्यताओं का उल्लेख हुआ है लेकिन कहानीकार ने आगे चलकर नाटकीय मोड़ देते हुए लिखा है– दोनों बहुए मार खा रही थीं। लोग–बाग अब उन्हें छुड़वा रहे थे।

''तुम लोग कौन हो? भगवान सजा देगा।''

ऊँची आवाज में रोती हुई चंदना ने कहा, ''भगवान ने तो खुद ही कहा था, सजा क्यों देगा?''

''छोड़ो इस छोटी–सी बच्ची को! मुझे सच–सच बता!'' वकील साहब की औरत ने चंदना को

अपने से सटा लिया। सिर पर हाथ फेरा, ''अब बोल मेरी बच्ची।''

''हर रात सपने में शिवजी आते थे'' गला रूंध गया चंदना का।

''हैं! सच?''

''कहते थे मेरे बच्चे नादान हैं। आपस में लड़ते–झगड़ते हैं। तुम तो सगी बहनें हो। सब मेल–जोल से रहो, तू अपनी बहन से मिलकर मुझे बीच से हटा दे।'' सिसकियों से आवाज दब गई।'[ix]

इस प्रकार पारिवारिक कलह के केन्द्र बिन्दु पूजास्थल को ढहा दिए जाने का ब्यौरा उत्तर आधुनिक युगबोध का द्योतक है। एक पड़ौसी प्रो. शौकत के बारे में कहता है– ''आप बड़े भोले हैं। उस दिन सबके सामने इन बच्चियों को प्रेरित तो कर गया कि रास्तों के अवरोधों को धराशायी कर देना चाहिए।''[x]

स्पष्ट है कि कहानीकार ने उत्तर आधुनिकतावादी विचारक डेनियल बेल की इस उक्ति को पात्रों के मुख से कहला दिया है– ''उपासना गृहों की तमाम मूर्तियाँ खण्डित हो चुकी है।'[xi] हरदर्शन सहगल की अन्य कहानियों में भी पात्रों ने पूजास्थलों के बजाय मानवता को महत्त्व प्रदान किया है।

देवस्थानों के प्रति अनास्था :–

हरदर्शन सहगल की कहानियों में आस्तिक पात्रों की ही भांति नास्तिक पात्रों का भी यथार्थपरक चित्रण मिलता है। 'कारोबार' कहानी में नैरेटर 'मैं' बताता है– ''सुबह–सवेरे इनते सारे लोगों की एक साथ उपस्थिति यही दर्शा रही थी कि भक्तजन हैं। मंदिर पास ही होगा। दरअसल मुझे मंदिर नहीं जाना था। मुझे तो सुन्दरजी का मकान ढूंढ निकालना था। हसन भाई ने जिस तरह से रास्ता समझाया था, उसके मुताबिक पहले मंदिर मिलेगा फिर मुझे मंदिर से आगे सीधा बढ़ना होगा।''[xii]

'कारोबार' कहानी में ही बेरोजगार नैरेटर 'मैं' किसी धंधे की तलाश में सुन्दरजी से सिफारिश करवाने के लिए उनके घर जाना चाहता है। मार्ग में वह भीड़ भरे स्थान को देखता है। तब उस दिन मैं थोड़ा आश्वस्त हुआ था कि मैं वहाँ पर क्यों था? मैं भीड़ के नजदीक पहुंचा, तो वहां पर कोई मंदिर दिखाई नहीं दिया। एक आदमी, सबसे अलग यूँ ही गफलत में आसमान की जानिब निगाहें उठाए खड़ा था। मैंने उसी से पूछा– ''क्या यहाँ पर कोई मंदिर नहीं है?''

उस पतले आदमी ने, जिसके कंधे और गालों की हड्डियाँ साफ दिखाई दे रही थी, एक उखड़ी हुई सांस ली। फिर न जाने कैसे जबाव में जोश भरते हुए उत्तर दिया– ''हाँ–हाँ भाईजी, सामने ही तो है! भला इससे बड़ा कौनसा मंदिर होगा?''[xiii]

कहानी का यह अंश बताता है कि आज के पूंजीवादी दौर में 'लॉटरी–शॉप' और 'वाइन–शॉप' को मंदिरों की बजाय अधिक महत्त्व दिया जा रहा है।

'पुनरागमन' शीर्षक कहानी में रेलयात्री नैरेटर 'मैं' अपने साथी यात्री नेकीराम से कहता है– ''कोई बात नहीं। रस्मो रिवाज तो निभाना ही पड़ता है। देवी की चौकी, जागरण जैसे जश्नों पर कौन किसी का ध्यान रखता है! फिर चाहे अनपढ़ों की श्रेणी हो या पढ़े–लिखों की, क्या फर्क पड़ता है?''[गपअ]

इस व्यंग्योक्ति से स्पष्ट है कि नैरेटर 'मैं' की उत्तर आधुनिक दृष्टि में इन देवस्थानों की रीति–रिवाजों के प्रति अनास्था ही झलकती है।

भाग्यवाद का खंडन :–

भारतीय धर्मशास्त्रों में 'कर्म' को महत्त्व दिया गया है। श्रीकृष्ण ने भागवत–गीता में 'कर्मस्य वाधिकारस्ते' का उपदेश दिया है लेकिन विभिन्न कर्मकाण्डी लोगों ने 'भाग्यवाद' को बढ़ावा देकर भारतीय समाज में जनता को भाग्यवादी बना दिया है।

कहानीकार हरदर्शन सहगल ने अपनी कहानियों में यथास्थान कोरे भाग्यवाद के भरोसे बैठे रहने की अवधारणा का खंडन किया है। 'जालमुक्त' कहानी में नैरेटर 'मैं' की माताजी नैरेटर की प्रेयसी मृदुला को कहीं दूरस्थ विवाह करवाकर अपने बेटे (नैरेटर) का विवाह धनी वकील की बेटी से करवाना चाहती है। कहानी के अंतिम भाग में मृदुला अपने पति से तलाक लेना चाहती है। कहानीकार बताता है कि स्वार्थी लोग अपना उल्लू सीधा करने के लिए निर्दोषों को भाग्य के हाथों कठपुतली बना देते हैं। कहानी का यह अंश द्रष्टव्य है– ''मेरी बात बीच में काटते हुए मृदुला फिर बोलने लगी– ''अब मैं ही सबसे ज्यादा जानने लगी हूँ उन्हें। वे स्वयं क्या हैं? न ढंग की सोच, न ढंग का जिस्म। चारों ओर से बदनाम। ऐसे हाथों उजड़ने से अच्छा है, अपने हाथों अपने दिनों को सँवार ले जाऊँ।''

मेज पर पड़े उसके हाथों को स्वतः मेरे हाथों से घेर लिया– '' थोड़ी देर पहले तुम किस्मत को दोष दे रही थीं। हमारा भाग्य–नियामक सदा अदृश्य ही क्यों रहता है? बहुधा किस्मत बिगाड़ने वाला

हमारे सामने रहता है, फिर भी हम उसे पहचान नहीं पाते। तुम्हारे साथ यही ट्रेजडी है। पहले तुम्हें मुझसे अलग कर गाँव भेज दिया, अब 'अपने उसको' डाँटने–समझाने की बजाय सिर्फ अपने वकील साहब को मामूली–सा केस देने के लिए तुम्हें उनके पास धकेला जा रहा है।''[xv]

''यहाँ कथानायक नैरेटर 'भाग्यवाद' को सीधे नकारता है। डॉ. बहादुरसिंह के अनुसार ''उत्तर आधुनिकतावाद की यह व्यवस्था 'बहिष्कार का नियम' कहलाता है।''[गअप]

हरदर्शन सहगल की विभिन्न कहानियों में कुछ पात्र आत्मचिंतन करते हुए कहीं भाग्य को ही कोसते बताए गए हैं लेकिन कुछ पात्र भाग्यवाद की भ्रांत धारणाओं का खंडन करके परिस्थितियों के आलोक में कारण ढूंढने का प्रयास करते दर्शाए गए हैं।

ब्राह्मणवादी सोच का खंडन :–

प्राचीन भारतीय चातुर्वर्णाश्रम व्यवस्था में ब्राह्मणों को प्रथम स्थान दिया गया था। उत्तर आधुनिकतावाद सीधे तौर पर ऐसी पारम्परिक धारणाओं का खंडन करता है। हरदर्शन सहगल की कहानियों में भी ऐसे कतिपय दृष्टांत उपलब्ध है।

'लपटें' शीर्षक कहानी में लियाकत बाबू बाजार में किसी गुंडागर्दी की घटना के चश्मदीद गवाह है। बदमाश उनको बयान बदलने के लिए दबाव डालते हैं लेकिन उसी समय पुलिस वाले उनके घर पर आ जाते हैं। तीनों लड़के बेखौफ होकर औपचारिक प्रणाम करते हैं। एक लड़का पुलिस रिपोर्ट का पुर्जा देखने के लिए मांगता है।

''पुर्जा तो इंस्पेक्टर के हाथ में ही था, जिसे दिखा–दिखाकर वह लियाकत बाबू को चेतावनी दे रहा था। लड़के ने फौरन पुर्जा झपट लिया। बड़े धैर्य से पढ़ा, फिर चिंदियों में तब्दील कर दीवार के सहारे फेंक दिया और उस पर पेशाब करने लगा।

''तुम सबूत नष्ट करने की धारा, धारा में धर लिये जाओगे। धारा अभी बताता हूँ। हवलदार साहब! जरा उठाइए सारे पुर्जे।''

''मैं तो ब्राह्मण हूँ महाराज! आप ही जरा...।''

''शटअप...।''[xvii]

स्पष्ट है कि एक पुलिसकर्मी अपने 'ब्राह्मणत्व' की शेखी बघारता है लेकिन दूसरा पुलिसकर्मी उसकी सोच को खंडन कर देता है।

अंधविश्वासों का खंडन :–

हरदर्शन सहगल की कहानियों ने विभिन्न धार्मिक अंधविश्वासों का खंडन हुआ है। 'जालमुक्त' कहानी का नैरेटर यह मानता है कि ''मृदुला की माँ बहुत ही नेक, भगवान की अंधीभक्त और साथ ही बहुत भोली महिला है।''[xviii]

'पुनरागमन' कहानी में यह दर्शाया गया है कि वंशी तो चाचा नेकीराम की कुलदेवता में आस्था के बारे में विश्वास करता है लेकिन उसकी पत्नी अनिता कदापि विश्वास नहीं करती है, वंशी बताता है– ''माँ रोती। हर रोज यही चाचा आते। परिवार को ढाढंस बंधाते– कुछ नहीं होगा इसे। जबान में विश्वास भरा होता। वहीं मेरी चारपाई के निकट पालथी मारकर बैठे रहते। अपने कुलदेवता से मेरे जीवन की दुआएँ मांगते। मैं भला–चंगा हो उठ बैठा। माता–पिताजी, इसके अतिरिक्त और भी इनके कितने एहसान मानते।''

''मैं ऐसी बातें नहीं मानती। मुझसे और बर्दाश्त नहीं होता। उन्हें रोकिए। मत आया करें!''

''मैं ऐसा नहीं कह सकता।''

''आप नहीं कहेंगे तो मैं ही कह दूंगी।''

वंशी प्रार्थना के स्वर में बोला– ''ऐसा कुछ मत कहना कि उस देवता की भावनाओं को ठेस लगे।'' परन्तु नहीं, अनिता नहीं मानी।''[xix]

इसी प्रकार यह हरदर्शन सहगल की उत्तर आधुनिकतावादी दृष्टि का ही सबूत है कि उन्होंने 'सत्संग' शीर्षक कहानी में धर्म और आस्था के नाम पर पनपती कालाबाजारी और लोगों की धार्मिक भावनाओं को बाजारवाद के धरातल पर भुनाने की चालाकियों पर प्रकाश डाला है।

संकीर्ण धार्मिकता का खंडन :–

हरदर्शन सहगल की कहानियों में देशकाल और वातावरण के अनुकूल पात्रों के नामकरण में भी धार्मिक युगबोध परिलक्षित होता है। अनेक कहानियों में सरदार जी जैसे सिक्ख परम्परा के नाम वाले पात्र

मिल जाएंगे। इन कहानियों में मुस्लिम, जैन एवं ईसाई धर्मावलंबी पात्रों को भी यथोचित स्थान दिया गया है।

'हारते हुए' शीर्षक कहानी में ललित अपने प्राणों की बाजी लगाकर अपने दोस्त शौकत की बीबी को साम्प्रदायिक दंगों की आग से बचाने में सफल होता है हालांकि वह अपनी पत्नी को हिन्दुओं के बीच छोड़ जाता है। यह कहानी संकीर्ण धर्मान्धता को करारा जवाब देती है।

शाकाहार–मांसाहार का द्वन्द्व :–

भारतीय संस्कृति में सनातन धर्म के कुछ पंथी शुद्ध शाकाहारी रहे हैं तो कुछ पंथी मांसाहार को हेय नहीं मानते हैं। सामाजिक एवं धार्मिक तौर पर शाकाहारी परिवार मांसाहारियों से दूरी बनाए रखते चले आए हैं लेकिन उत्तर आधुनिक दौर में समसामयिक परिवेश बदल चुका है और कुछ परिवार इनका मध्यम–मार्ग निकाल लेते हैं।

कहानीकार हरदर्शन सहगल की कुछ कहानियों में धार्मिक दृष्टिकोण में इसी बदलाव की ओर इंगित किया गया है। 'शादी की सालगिरह' शीर्षक कहानी में मैरिज एनिवर्सरी की तैयारी करती हुई सुलक्षणा को मदन कहता है– ''इस वक्त तो तुम्हीं डाँट रही हो। अब सिनेमा नहीं चलना?''

''तुम्हीं हो आओ। एक बार आपने बताया था न सिनेमा हाल के साथ एक दुकानदार है जो बहुत सस्ते अंडे बेचता है। कुछ लोग मीट नहीं खाते। अंडे माँग लेते हैं। तब तक मैं चने साफ कर उबलने के लिए रखती हूँ। वेजिटेरियन नॉन वेजिटेरियन सभी का ध्यान रखना है। इतने लोगों को बुलाया है, नाक तो नहीं कटवानी।''

मदन अण्डे लेकर आया तो ऐसे ही दोनों ने कुछ खा–पी लिया। फिर सुलक्षणा ने मदन को स्वीट डिश के लिए पिसी हुई गरी लाने को भेज दिया।''[xx]

इसी प्रकार 'प्रहार' शीर्षक कहानी में प्रियेश अपने मित्र जनार्दन के साथ जब प्रदीप के दफ्तर में लंच के समय पहुंचता है तो प्रदीप तकरीबन खाना खा चुके थे। थाली के किनारे काफी सारी हड्डियों के टुकड़े सिमटे पड़े थे। ''ओह, आप लोग खाना खायेंगे? वैजिटेरियन या नॉन वैजिटेरियन?'' जिंदादिल आवाज थी प्रदीप की।

''कुछ भी नहीं। मैं तो सिर्फ चाय पीने को किसी दोस्त के साथ आया था। वह चला गया तो यह दिख गये। अब खाना तो हम लोग घर जाकर ही खायेंगे। आपने तो खा लिया। वरना हमारे साथ चलकर खाते।'' जनार्दन ने अपनी दाढ़ी को मलते हुए ऐसे कहा जैसे यहाँ भी किसी नाटक की विशेष भूमिका प्रस्तुत कर रहा हो।

''नॉन वैजिटेरियन बनवाओ तो कल ही हाजिर हो जाऊँ। घर पर कुछ अलग ही तफरीह होती है। मिसेस हमारी तो साथ देती नहीं, इसलिए वक्तन–फवक्तन होटल का सहारा लेना पड़ता है।''[xxi]

निष्कर्ष :–

समग्रतः कहना ही होगा कि हरदर्शन सहगल ने अपनी कहानियों में विभिन्न धार्मिक मान्यताओं के औचित्य पर मौलिक दृष्टि से विचार करते हुए वर्तमान आधुनिक युग में तमाम रूढ़िबद्ध धार्मिक धारणाओं को खंडन के तौर पर पुनर्विवेचित किया है।

कोरे भाग्यवाद के भरोसे जीवनयापन असंभव है, इस बात को विभिन्न पात्र अपने संवादों के द्वारा स्पष्ट कर देते हैं। तकदीर, नसीब, किस्मत आदि शब्दों का प्रयोग आज के उत्तर आधुनिक दौर में बोलचाल का मुहावरा मात्र बनकर रह गया है। इसी प्रकार शाकाहार–मांसाहार के द्वन्द्व के रूप में समन्वय की दृष्टि रखने वाले पात्रों का चित्रण भी उत्तर आधुनिकता बोध का द्योतक है। देवस्थानों के नाम पर कलह को भी अनुचित बताया गया है। इसी प्रकार काम संबंधों के संदर्भ में पौराणिक उल्लेखों का भी उत्तर आधुनिक दृष्टिकोण से पुनर्निरूपण कहानीकार हरदर्शन सहगल की रचनाओं का वैशिष्ट्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

---

[i]डॉ. बहादुरसिंह; हिन्दी साहित्य का इतिहास, माधव प्रकाशन, यमुनानगर (हरियाणा), चतुर्थ संस्करण 2012, पृ. सं. 440

[ii] डॉ. विवेकशंकर; हिन्दी साहित्य, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर द्वितीय, संस्करण 2016, पृ.सं. 503

[iii] सहगल, हरदर्शन; वर्जनाओं को लांघते हुए, मेधा बुक्स, दिल्ली, 1999, पृ. सं. 37

[iv] वही, पृ. सं. 10
[v] वही, पृ. सं. 12
[vi] वही, पृ. सं. 13
[vii] वही, पृ. सं. 15
[viii] सहगल, हरदर्शन, सरहद पर सुलह, मेधा बुक्स, दिल्ली, 1999, पृ. सं. 37
[ix] वही, पृ. सं. 38
[x] वही, पृ. सं. 39
[xi] डॉ. बहादुरसिंह, वही, पृ. सं. 440
[xii] सहगल, हरदर्शन; सरहद पर सुलह, पृ. सं. 49
[xiii] वही, पृ. सं. 50
[xiv] वही, पृ. सं. 71
[xv] वही, पृ. सं. 48
[xvi] डॉ. बहादुरसिंह; वही, पृ. सं. 446
[xvii] सहगल, हरदर्शन; सरहद पर सुलह, पृ. सं. 92
[xviii] वही, पृ. सं. 41
[xix] वही, पृ. सं. 76
[xx] सहगल, हरदर्शन; मर्यादित, अनुराग प्रकाशन, नई दिल्ली, 1990, पृ. सं. 28
[xxi] वही, पृ. सं. 442